'मास्टर' मणिमालायाः १६ संख्यको मणिः (ज्यौ० वि० २२)

* श्रीः *

महर्षिलोमशप्रणीतं

धराचक्रम्

सम्पादकः —

पं० श्रीसीताराम झा ज्यौ० आ०

—०—

प्रकाशकः—

मास्टर खेलाड़ीलाल ऐण्ड सन्स

संस्कृत-बुकडिपो,

कचौड़ीगली, बनारस सिटी ।

—०—

मूल्यम् ≋)



* श्रीः *

श्रीमन्महर्षिलोमशप्रणीतं

* धराचक्रम् *



मिथिलादेशान्तर्गत-चौगमानिवासि-काशीस्थ-संन्यासि-संस्कृत-
महाविद्यालय-प्रधानाध्यापक-ज्यौतिषाचार्य-तीर्थ-
पण्डितश्रीसीतारामशर्मकृत-
सोदाहरण-सरलार्थ-सहितम्।



तेनैव संशोधितञ्च।



तच्च
काशीस्थ—'संस्कृत-बुकडिपो'ऽध्यक्षैः
मास्टर खेलाड़ीलाल ऐण्ड सन्स महोदयैः
प्रकाशितम्।



तृतीयं संस्करणम्] सम्वत् २०१२ मूल्यम् ≡)



प्रकाशकः—
जे० एन० यादव, प्रोप्राइटर,
मास्टर खेलाड़ीलाल ऐण्ड सन्स,
'संस्कृत बुकडिपो' काशी।



मुद्रकः—
मास्टर प्रिण्टिङ्ग वर्क्स,
बनारस सिटी।

प्राक्कथन

"अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवादस्तत्र केवलः।
प्रत्यक्षं ज्यौतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ ॥"

समस्त भुवनमान्य वेदों में यज्ञादि कर्मों के आदेश हैं। वे यज्ञादि कर्म देश, दिशा और काल के अधीन हैं, तथा इन तीनों का ज्ञान ज्यौतिष शास्त्र से ही होता है, इसलिये वेदाङ्गों में ज्यौतिषशास्त्र सर्वश्रेष्ठ (अर्थात् नेत्र) माना जाता है। इसी शास्त्र के आधार से मनुष्य भूत वर्तमान् और भविष्य फल बतला सकता है। किन्तु कालवश दिव्यदृष्टि महर्षिगण प्रणीत ग्रन्थ सब लुप्तप्राय हो रहे हैं। कारण यह है कि—कुछ ग्रन्थ विधर्मियों के द्वारा नष्ट कर दिये गये। और "गोप्यं गोप्यं प्रयत्नेन न देयं यस्य कस्यचित्" इत्यादि महर्षिगणों के वाक्य से भी कितने ही ग्रन्थ गुप्त करते करते लुप्त हो गये। तथापि भारतीयों के भाग्यवश महर्षिवर श्रीलोमशप्रणीत संहिता के प्रायः कुछ अंश बचे हैं। जिसमें अदृष्ट अश्रुत पृथिवी स्थित वस्तु के ज्ञानार्थं एक अध्याय 'धराचक्र' नाम से प्रसिद्ध है। किन्तु यह भी ग्रन्थ अलभ्य नहीं तो दुर्लभ अवश्य ही कहा जा सकता था। कारण-यत्न पुरस्सर कितने दिनों की खोज से संयोगवश सैकड़ों वर्ष पूर्व की हाथ की लिखी पुरानी पुस्तक मूलमात्र एक प्रति मुझे मिली। जिसमें लेखक के प्रमाद से बहुत अशुद्धियाँ और मूल श्लोकों की उलटफेर थी। मैंने आद्योपान्त पुस्तक को देखकर और अत्यन्त उपयोगी समझ कर यथोपक्रम मूल श्लोकों को शुद्धतापूर्वक ठीक करके लोगों के उपकारार्थं सरल भाषार्थं और उदाहरण से विभूषित करके विख्यातकीर्ति—"मास्टर खेलाडीलाल एण्ड सन्स, कचौड़ीगली बनारस" को प्रकाशनार्थं समर्पण कर दिया। इससे लोगों का कुछ भी उपकार हो तो मेरा परिश्रम सफल होगा। मनुष्य धर्मवश इसमें जो कुछ त्रुटि रह गई हो और वह जिन महानुभावों को मालूम हो वे मुझे कृपया सूचित करें तो मैं उनका कृतज्ञ बनकर अन्य संस्करण में उन त्रुटियों के सुधार करने का प्रयत्न करूँगा। विशेष क्या ?

"स्खलनं गच्छतः क्वापि भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः ॥"

विनीत—श्रीसीताराम झा (चौगमा)

अथ चक्रसङ्केत—

इस जम्बूद्वीप के मध्य में सुमेरु पर्वत है, समेरु पर्वत से विभक्त जम्बूद्वीप का आधा भाग देवों का, और आधा दैत्यों का है। भारत की तरफ देवों का और इससे विरुद्ध भाग दैत्यों का है। सुमेरु के चारों तरफ क्रम से निषध, सुगन्ध, नील और माल्यवान् नाम के चार पर्वत हैं, इन चारों पर्वत से घिरा हुआ इलावृत खण्ड है जो स्वर्ग कहलाता है। और निषध पर्वत से दक्षिण हेमकूट नामक पर्वत पर्यन्त मध्य में पूर्व-पश्चिम समुद्र पर्यन्त जो खण्ड है वह हरि वर्ष कहलाता है। तथा हेमकूट नामक पर्वत से दक्षिण हिमालय पर्यन्त मध्य में पूर्व-पश्चिम समुद्र पर्यन्त जो खण्ड है वह किन्नर वर्ष है। इसी में चीन, महाचीन, तिब्बत है। और हिमालय से दक्षिण समुद्र पर्यन्त जो जम्बूद्वीप का खण्ड है वह यही भारतवर्ष है। ये तीनों (हरि, किन्नर, भारत) खण्ड देवभाग में हैं, और इन तीनों खण्ड के अधिपति चन्द्रमा माने गये हैं। तथा हम लोगों की अपेक्षा से सुमेरु के विरुद्ध (उत्तर) भाग में क्रम से नील, शुक्ल, और शृङ्गवान नामक तीन पर्वत हैं तथा उन पर्वतों के बीच में क्रम से रम्यक, हिरण्य, तथा कुरु वर्ष नाम के ३ खण्ड हैं, ये दैत्य के भाग में पड़ते हैं तथा इन तीनों खण्ड के अधिपति सूर्य हैं। तथा इलावृत खण्ड के पूर्व भाग में माल्यवान् पर्वत और पूर्व समुद्र के बीच में भद्राश्व नामक खण्ड है। एवं इलावृत के पश्चिम भाग में सुगन्ध पर्वत और पश्चिम समुद्र के बीच में केतुमाल नामक खण्ड है। इन (इलावृत, भद्राश्व, केतुमाल) तीनों खण्ड के सूर्य और चन्द्र दोनों अधिपति हैं। इसलिये ये मिश्र वर्ष कहलाते हैं। महर्षि लोमश ने देव भाग (भारतादि ३ खण्ड) में नव

खण्डों का क्रम इस प्रकार कहा है यथा—इलावृत, भद्राश्व, हरि, किन्नर, भारत, केतुमाल, रम्यक, हिरण्य, कुरु। इन्हीं नवों खण्ड को १०८ कोष्ठ के धरा चक्र में १२।१२ अंश करके बांटा है। तथा दिन रात्रि के प्रहर विभाग में दिशाओं विदिशाओं के भिन्न-भिन्न मान कल्पना कर वृषादि तथा वृश्चिकादि से आरम्भ कर १२ राशियों के नवांश स्थापन किया है। जो आगे मूल तथा उदाहरण से स्पष्ट है।

उदाहरण के चक्र में संकेताक्षर इस प्रकार है—

मे=मेरु। इ=इलावृत। ह=हरिवर्ष। किं=किन्नरवर्ष। भा =भारतवर्ष। भ=भद्राश्व वर्ष। के=केतुमाल। र=रम्यक। हि =हिरण्य। कु=कुरुवर्ष।

तथा चं=चन्द्र। सू=सूर्य। मं=मंगल। बु=बुध। बृ=बृहस्पति। शु=शुक्र। श=शनि। रा=राहु।

और विषय टीका तथा उदाहरण से स्पष्ट है॥ इति॥



❋ विषय-सूची ❋



❀ श्रीः ❀

महर्षिलोमशप्रणीतं

❀ धराचक्रम् ❀

अथ टीकाकारकृतमङ्गलाचरणम्—

नौमि श्रीशं गणाधीशं मुनीशं लोमशं च तम् ।
उक्तं लोकोपकाराय येन ज्ञानमनुत्तमम् ॥ १ ॥
"धराचक्रं" धरान्तःस्थभ्रान्तद्रव्यादिबोधकम् ।
तस्यार्थं बालबोधाय स्पष्टं सोदाहृतिं ब्रुवे ॥ २ ॥
मैथिलश्चौगमावासी काशीस्थोऽध्यापयन् द्विजान् ।
श्रीसीताराम-नामाऽहं भारद्वाज-कुलोद्भवः ॥ ३ ॥

अर्थ—भारद्वाजगोत्र चौगमाग्रामनिवासी मैं श्रीसीताराम नामक मैथिल ब्राह्मण काशी में द्विजातियों को पढ़ाता हुआ श्रीलक्ष्मीपति भगवान् को तथा श्रीगणेशजी को और उन मुनिश्रेष्ठ श्रीलोमश को प्रणाम करता हूँ, जिन्होंने लोकोपकार के लिये पृथ्वीस्थित द्रव्यादि के ज्ञानकारक उत्तम ज्ञान 'धराचक्र' नामक ग्रन्थ बनाया। मैं बालकों के बोध के लिए उस (धराचक्र) का उदाहरण सहित सरल अर्थ कहता हूँ ॥ १–३ ॥

अथ स्वस्थं सुखासीनं लोमशं मुनिसत्तमम् ।
सुतजन्मा द्विजो भूयो नत्वा प्रोवाच सादरम् ॥ ४ ॥

अर्थ—सुखपूर्वक बैठे हुए मुनिश्रेष्ठ लोमश को आदरपूर्वक बारम्बार नमस्कार कर सुतजन्मा नामक ब्राह्मण बोला ॥ ४ ॥

विप्र उवाच—

यत्र भूमिस्थितं द्रव्यं शल्यं तोयं च दैवतम् ।
कथं ज्ञानं भवेत्तस्य केनोपायेन लभ्यते ? ॥ १ ॥

श्रुतं नास्ति च यद्वित्तं दृष्टं नास्ति च यद्वसु ।
तत्कथं लभ्यते स्वामिन्!? वद मे मुनिसत्तम!॥ २ ॥

अर्थ—ब्राह्मण बोला—हे मुनिश्रेष्ठ! जिस किसी स्थान में पृथ्वी के अभ्यन्तर द्रव्य (सुवर्ण आदि), शल्य (हड्डी आदि) तथा जल और देवता रहते हैं, उनका ज्ञान किस प्रकार हो सकता है। और किस उपाय से उन द्रव्यादि का लाभ हो सकता है। तथा जिस धन को कभी सुना नहीं और जिस धन को कभी देखा नहीं वह किस प्रकार मिल सकता है सो कृपया मुझसे कहिये ॥ १-२ ॥

मुनिरुवाच—

साधु पृष्टं त्वया वत्स! लोकानां भाग्यवर्धनम् ।
एतेषां लक्षणं वक्ष्ये येन ज्ञानं भवेन्नृणाम् ॥ ३ ॥

अर्थ—महर्षि लोमश बोले—बच्चा! तुमने लोगों का भाग्यवर्धक प्रश्न अच्छा किया। जिस प्रकार लोगों को इन वस्तुओं का ज्ञान हो उसी प्रकार मैं इनके लक्षण कहता हूँ ॥ ३ ॥

श्रवणं गीतनादस्य वाद्यस्य श्रवणं तथा ।
प्रकाशो दृश्यते यत्र निशान्ते निश्चितं निधिः ॥ ४ ॥

अर्थ—जहाँ पर स्वयं गीत और बाजे का शब्द सुन पड़े, तथा रात्रि के अन्त में स्वयं प्रकाश देख पड़े वहाँ निश्चय द्रव्य रहता है ॥ ४ ॥

सर्पाणां दर्शनं चैव जायते यत्र नित्यशः ।
नकुलानां च सदनं सरठानां तथैव च ॥ ५ ॥
दर्शनं खञ्जरीटानां प्रभाते यदि जायते ।
उदङ्मुखानां सायाह्ने तत्र स्यान्निश्चितं निधिः ॥ ६ ॥

अर्थ—जिस स्थान में नित्य सर्प का दर्शन हो तथा न्योले का बिल और सरठ (बड़ा गिरगिट) देख पड़े, तथा प्रातः और सायंकाल उत्तराभिमुख खञ्जन देखने में आवे वहाँ निश्चय धन समझना ॥ ५-६ ॥

सरीसृपाणां रक्तानां दर्शनं यत्र नित्यशः ।
पिपीलिकानां च तथा तत्र द्रव्यं न संशयः ॥ ७ ॥

अर्थ—लाल रंग का सर्प जहाँ नित्य देखने में आवे, तथा लाल ही रंग की चूटी देख पड़े तो वहाँ भी निश्चय द्रव्य समझना ॥ ७ ॥

आरोप्य चतुरः पादान् यत्र श्वा मूत्रमुत्सृजेत् ।
चषाणां वसनं यत्र तदधो निश्चितं निधिः ॥ ८ ॥

अर्थ—* जिस स्थान पर कुत्ता चारो पैर रोप कर मूत्र त्याग करै और जहाँ पर चाष (चाहा) पक्षी का निवास हो उस स्थान में निश्चय द्रव्य समझना ॥ ८ ॥

श्वेतपुष्पा च बृहती दृश्यते यत्र भूतले ।
तत्र द्रव्यं न सन्देहो ज्ञेयं देवेन रक्षितम् ॥ ९ ॥

अर्थ—जिस स्थान में उज्ज्वल पुष्पवाली बृहती (भटकटैया) हो उस स्थान में अवश्य ही देवों से रक्षित द्रव्य रहता है ॥ ९ ॥

पद्मगन्धा धरा यत्र पुष्पतोयाभिषिञ्चने ।
सुश्वेतमधुरा स्निग्धा ज्ञेयं तत्र धनं ध्रुवम् ॥ १० ॥

अर्थ—जिस पृथ्वी में कमल के समान सुगन्ध हो तथा जल सींचने से पुष्प के समान सुगन्ध निकले और मिट्टी चिकनी और श्वेत तथा स्वाद में मीठी हो तो निश्चय वहाँ धन समझना ॥ १० ॥

नारीणां सुन्दरीणां च नित्यं स्वप्ने प्रदर्शनम् ।
यत्र श्वेता सवत्सा गौः श्वेतसर्पश्च मौक्तिकम् ॥ ११ ॥
हरिद्रा तोयजानां च प्रभाते दर्शनं मुहुः ।
तत्रापि निश्चितं द्रव्यं ज्ञेयं लक्षणवेदिभिः ॥ १२ ॥

अर्थ—जिस स्थान में शयन करने से स्वप्न में सुन्दरी स्त्रियाँ,

* कुत्ता स्वभावतः पैर उठा कर मूतता है, परन्तु जिस स्थान पर द्रव्य रहता है वहां पैर रोप करही मूतता है।

सवत्सा श्वेत गाय, श्वेत सर्प, मोती, हल्दी और कमल या मत्स्य आदि जलजन्तु प्रातःकाल (रात्रिशेष) में देख पड़ें तो उस स्थान में निश्चय द्रव्य समझना चाहिये ॥ ११-१२ ॥

स्निग्धा सुशर्करायुक्ता मृत्तिका लक्ष्यते यदि ।
सर्वे स-कण्टका वृक्षा दृश्यन्ते यत्र भूतले ॥१३॥
यत्र पिपीलिकादीनां दृश्यन्तेऽण्डानि नित्यशः ।
यत्र दूर्वाङ्कुराढ्याभूस्तत्र तोयं न संशयः ॥१४॥

अर्थ—जहाँ चिकनी और चीनी के सदृश स्वादवाली मिट्टी और सब वृक्षों में काँटे ही देख पड़ें, तथा नित्य चूटी आदि के अण्डे देखने में आवे तथा दूब (दूर्वा) युक्त भूमि हो तो निश्चय वहाँ जल रहता है ॥ १३-१४ ॥

देवानां दर्शनं यत्र विप्राणां दर्शनं तथा ।
यत्राऽग्निर्दृश्यते स्वप्ने गव्यानां दर्शनं तथा ॥१५॥
तुलसी स्वयमुत्पन्ना यत्र तत्र च भूतले ।
निम्बाऽश्वत्थादिवृक्षाश्च तत्र देवो न संशयः ॥१६॥

अर्थ—जिस स्थान में शयन करने से स्वप्न में देवता, ब्राह्मण, अग्नि और दूध-दही-घृत आदि देख पड़े, तथा जहाँ स्वयं तुलसी, निम्ब, पीपल आदि के वृक्ष उत्पन्न हों उस स्थान में निश्चय देव रहते हैं ॥१५–१६॥

यत्रोषरप्रयुक्ता भूः शृगालाद्यैः समन्विता ।
वृक्षाः स्वयं विनश्यन्ति तत्र शल्यं न संशयः ॥१७॥

अर्थ—जहाँ की भूमि ऊषर और शृङ्गाल (सियार) आदि जानवरों से युक्त हो तथा वृक्ष अकारण ही सूख जाय वहाँ निश्चय शल्य समझना ।

यत्र तैलप्रपूर्णोऽपि स्वयं दीपो विनश्यति ।
मन्दा ज्योतिर्हि दीपस्य दृश्यते यत्र भूतले ॥१८॥

चित्तमुद्वेगसंयुक्तं जायते यत्र संस्थिते ।
नानाविघ्नयुता भूमिस्तत्र शल्यं न संशयः ॥१९॥

अर्थ—जिस स्थान में तेलपूर्ण दीप लेसने पर स्वयं बुत जाय अथवा दीप की ज्योति धीमी (तेज रहित) मालूम हो, जहाँ पर बैठने से चित्त में उद्वेग मालूम हो और अनेक प्रकार के विघ्न हों उस स्थान में अवश्य शल्य समझना ॥१८–१९॥

फलितः पुष्पितो वृक्षो वन्ध्यास्त्री भग्नभाण्डकम् ।
तैलं तारागणश्चैव स्वप्ने शल्यस्य सूचकाः ॥२०॥
जलप्रतरणं स्वप्ने शृगालादिकदर्शनम् ।
तत्र शल्यं वदेत् सत्यं तत्स्थानं च भयप्रदम् ॥२१॥

अर्थ—स्वप्न में पुष्प और फल युक्त वृक्ष, वन्ध्या स्त्री, फूटा हुआ भाण्ड (वर्तन), तैल और तारागण ये सब शल्यसूचक होते हैं। तथा जिस स्थान में जल में तैरना और शृगाल आदि जन्तुओं का स्वप्न में दर्शन हो वहाँ अवश्य ही शल्य समझना और वह स्थान भय-प्रद होता है ॥२०–२१॥

एवं ज्ञात्वा धनं शल्यं दैवतं जलमेव च ।
तत्र स्थाप्यं धराचक्रं द्रव्यशल्यादिसूचकम् ॥२२॥

अर्थ—इस प्रकार धन, शल्य, देवता और जल के लक्षण समझ कर वहाँ 'आगे कहे हुए विधि से' द्रव्यादिसूचक धराचक्र की स्थापना करे ॥

अथ धराचक्रस्थापनार्थं प्रश्नेष्टकाले
लग्नादिस्फुटतामाह—

सूर्योदयादिष्टनाड्यो द्विघ्नाः शरविभाजिताः ।
युक्ताः स्पष्टार्कराश्यादौ स्फुटं लग्नं भवेद्ध्रुवम् ॥२३॥

अर्थ—प्रश्नकाल में सूर्योदय से जितनी इष्ट घटी हो उसे २ से

गुनाकर ५ का भाग देने से लब्धि राश्यादि को स्पष्ट सूर्य के राश्यादि में जोड़ने से स्पष्ट लग्न होता है * ॥ २३ ॥

सार्धद्विघटिकामान-मर्काल्लग्नं भवेदिह ।
चरे तन्नवमांशो यः स्थिरे तन्नवमादितः ॥२४॥
द्विस्वभावे सुताद् ज्ञेयस्तदंशो मेरुसंज्ञकः ।

अर्थ—यहाँ सूर्योदय से अढ़ाई-अढ़ाई घड़ी एक-एक लग्न का उदयमान माना गया है। इस प्रकार लग्न यदि चर हो तो उसी का नवांश, यदि स्थिर हो तो लग्न से नवमें राशि का, तथा द्विस्वभाव हो तो लग्न से पञ्चम राशि का 'लग्नवांशतुल्य' जो नवांश हो वह मेरु कहलाता है ॥ २४ ॥ $\frac{1}{2}$ ॥

अथ चक्रे इलावृत्तादिवर्षन्यासप्रकारमाह—

यत्रांऽशे संस्थितो मेरुस्तदादिद्वादशांशकाः ॥२५॥
'इलावृत्ता'ख्यकं ज्ञेयं, तदग्रे द्वादशांशकाः ।
'सुभद्राश्वा'भिधं ज्ञेयं तदग्रे द्वादशांशकाः ॥२६॥
'हरिवर्ष' ततो ज्ञेयं तत्तुल्यं 'किन्नरा'ह्वयम् ।
ततो 'भारत'संज्ञं च 'केतुमाला'भिधं ततः ॥२७॥
'रम्यका'ख्यं ततो ज्ञेयं 'हिरण्या'ख्यं कुरु तथा ।

अर्थ—उपरोक्त विधि से जिस अंश में मेरु हो वहाँ से 'चक्र में'

---

* यहाँ होरा लग्न की रीति से 'स्पष्ट लग्न' बनाया गया है। सूर्योदय से एक होरा (अर्थात् अढ़ाई घड़ी) प्रत्येक लग्न के मान होने के कारण 'होरा लग्न' कहलाता है। इस लिये अढ़ाई घड़ी ($\frac{5}{2}$) में १ लग्न अथवा पांच घड़ी में २ लग्न तो इष्ट घड़ी में क्या ? इस अनुपात से लब्ध राश्यादि = (२×इघ) को सूर्य में जोड़ने से स्पष्ट लग्न का आनयन उपपन्न होता है।

अहिबल चक्र में सूर्य और चन्द्रमा की स्पष्टता की गई है। और यहां केवल लग्न ही की स्पष्टता की गई। और सब ग्रह अपनी अपनी गति के अनुसार चालन देकर तात्कालिक स्पष्ट बनाये जाते हैं। इति।

१२ अंश तक 'इलावृत्त' नामक वर्ष, उसके आगे १२ अंश भद्राश्व वर्ष, उसके आगे १२ अंश हरिवर्ष, उसके आगे १२ अंश किन्नर वर्ष, उसके आगे १२ अंश भारतवर्ष, उसके आगे १२ अंश केतुमाल वर्ष, उसके आगे १२ अंश रम्यक वर्ष, उसके आगे १२ अंश हिरण्मय वर्ष, फिर उसके आगे १२ अंश कुरु वर्ष समझना ॥ २५-२७ ॥ ३/२ ॥

इस प्रकार द्वादश राशि के नवांश चक्र में ज़म्बू द्वीप के ९ नवों खण्डों (वर्षों) का न्यास करना। आगे उदाहरण में स्पष्ट है।

अथ चन्द्र-सूर्ययोर्वर्षाण्याह—

विधोर्वर्षाणि ज्ञेयानि त्रीणि हर्यादिकानि च ॥२८॥
त्रीणि वै रम्यकादीनि भानोः शेषाणि तद्द्वयोः।
एवं देवविभागेषु दैत्यांशे व्यत्ययाद् वदेत् ॥२९॥

अर्थ—उक्त ९ वर्षों में हरिवर्ष, किन्नरवर्ष, भारतवर्ष, ये तीन (३) चन्द्र के और रम्यक वर्ष, हिरण्य वर्ष, कुरु वर्ष ये (३) सूर्य के, तथा शेष इलावृत, भद्राश्व, और केतुमाल ये तीनों (३) वर्ष सूर्य और चन्द्र दोनों के हैं। इस लिये ये तीनों मिश्र वर्ष कहलाते हैं। इस प्रकार से वर्ष के विभाग देव भाग (दक्षिण समुद्र और सुमेरु के बीच) में है। दैत्य के भाग उत्तर कुरु और सुमेरु के बीच में उक्त रीति से विपरीत समझना ॥ २८-२९ ॥

वर्षाधीशचक्रम्—

वर्षाधीश	देवभाग	दैत्यभाग
चन्द्र वर्ष	हरि, किन्नर, भारत,	रम्यक, हिरण्य, कुरु,
सूर्य वर्ष	रम्यक, हिरण्य, कुरु	हरि, किन्नर, भारत,
मिश्र वर्ष	भद्राश्व, इलावृत, केतुमाल	भद्राश्व, इलावृत, केतुमाल

अथ नवांशस्थापनपूर्वकं चक्ररचनामाह—

त्रयोदशोर्ध्वगा रेखा दश तिर्यग्गतास्तथा।

कोष्ठानि तत्र जायन्ते शतान्यष्टाधिकानि च ॥३०॥
अधोऽधः क्रमतो लेख्यमङ्कानां नवकं बुधैः ।
दिने वृषादितो लेख्यं रात्रौ तु वृश्चिकादितः ॥३१॥
ईशानकोणमारभ्य यामद्वयमिनोदयात् ।
ततो यामद्वयं वह्निकोणाद् यामद्वयं ततः ॥३२॥
नैर्ऋत्यकोणतो, वायुकोणाद् यामद्वयं तथा ।
एवं संस्थाप्य चक्रे तु ततः खेटान् प्रविन्यसेत् ॥३३॥

अर्थ—१३ रेखा ऊर्ध्वाधर और १० तिरछी रेखा लिखने से १०८ कोष्ठक का चक्र बनता है। यदि दिन में इष्टकाल हो तो वृषादिक से और रात्रि में इष्टकाल हो तो वृश्चिकादिक से आरम्भ कर अधोऽधः (ऊपर से नीचे के क्रम से) प्रत्येक राशि के ९।९ नवांश के अंक लिखे। "चक्र के ऊपर भाग से आरम्भ कर आठों दिशा का न्यास करके" सूर्योदय से दो पहर तक ईशान कोण से, उसके बाद दो पहर तक अग्निकोण से, उसके बाद (रात्रि में) दो पहर तक नैर्ऋत्यकोण से तथा उसके बाद दो पहर तक वायुकोण से आरम्भ कर १२ राशियों के नवांश लिखकर अपने अपने नवांश में सूर्यादि ग्रहों को लिखें ॥३०-३३॥

अथ ग्रहान् विनश्य द्रव्यादिज्ञानमाह—

यस्मिन्नंशे स्थिता ग्रे च खेटाः स्युर्भास्करादयः ।
चन्द्रवर्षे यदाऽर्केन्दू निधिर्ज्ञेयस्तदा ध्रुवम् ॥३४॥
तौ सूर्यवर्षगौ शल्यं वाच्यं तत्र न संशयः ।
मिश्रवर्षे गतौ तौ चेद् देवता तत्र निश्चितम् ॥३५॥
सूर्यवर्षे यदा चन्द्रश्चन्द्रवर्षे यदा रविः ।
तत्र शून्यं विजानीयाल्लेशोऽपि नैव लभ्यते ॥३६॥
स्व-स्ववर्षगतौ द्वौ चेत् शल्यं द्रव्यं*सविघ्नकम् ।

* "स्वल्पं द्रव्यम्" इति पाठान्तरम् ।

अर्थ—सूर्यादि ग्रह जिस २ अंश में हो उससे विचार करे। यथा—सूर्य और चन्द्रमा दोनों चन्द्र के वर्ष में पड़े तो निश्चय अभीष्ट भूमि में द्रव्य समझना। यदि सूर्य और चन्द्रमा दोनों सूर्य के वर्ष में पड़ें तो इष्ट भूमि में शल्य है, ऐसा समझना। दोनों यदि मिश्र वर्ष में हो तो उस भूमि में देवता समझना। यदि सूर्य वर्ष में, चन्द्रमा और चन्द्र वर्ष में सूर्य पड़े तो इष्ट भूमि में द्रव्यादि शून्य (कुछ भी नहीं) समझना। यदि सूर्य और चन्द्र अपने अपने वर्ष में हो तो शल्य और द्रव्य दोनों ही विघ्न सहित समझना चाहिये ॥ ३४-३६½ ॥

स्वस्य वर्षे स्थितः सूर्यो मिश्रवर्षे निशाकरः ॥३७॥
भिन्नभाण्डं वदेत्तत्र तुषकेशादिसंयुतम् ।

अर्थ—यदि सूर्य अपने वर्ष में हो और चन्द्रमा मिश्र वर्ष में हो तो फूटे हुए भाण्ड (वर्तन) में भुस्सा, केश, कोइला आदि कहना ॥३७॥

सूर्यवर्षे स्थितश्चन्द्रो मिश्रवर्षे दिवाकरः ॥३८॥
धनं बहुविधं तत्र दृश्यते न तु लभ्यते ।

अर्थ—चन्द्रमा सूर्य के वर्ष में और सूर्य मिश्र वर्ष में हो तो बहुत प्रकार के द्रव्य देख पड़ने पर भी लाभ नहीं होता है ॥ ३८ ॥

चन्द्रवर्षे दिवानाथो मिश्रवर्षे निशाकरः ।
तत्र द्रव्यमलभ्यं स्याद्रक्षोभूतादिसंयुतम् ॥३९॥

अर्थ—चन्द्र के वर्ष में सूर्य हो और मिश्र वर्ष में चन्द्रमा हो तो वहाँ राक्षस भूत आदि से युक्त द्रव्य रहता है इस लिये लाभ नहीं हो सकता है ॥ ३९ ॥

स्वस्य वर्षे यदा चन्द्रो मिश्रवर्षे यदा रविः ॥४०॥
धनं च विद्यते तत्र दृश्यते नैव नैव च ।
उद्योगस्तत्र कर्तव्यो येन वै लभ्यते धनम् ॥४१॥

अर्थ—चन्द्रमा अपने वर्ष में हो और सूर्य मिश्र वर्ष में पड़े तो

वहाँ धन रहने पर भी दृष्ट नहीं होता, इस लिये उसके लाभ के लिये यत्न करना ॥ ४०-४१ ॥

एवं द्रव्यादिज्ञानं कृत्वा द्रव्यमस्ति चेत् कुत्रास्तीति
ज्ञानार्थं चक्रचालनमाह—

एवं च निश्चयं कृत्वा स्थानं सञ्चालयेद् बुधः ।
तदहं संप्रवक्ष्यामि स्वमतेनाऽवधारय ॥४२॥

अर्थ—इस प्रकार द्रव्य का निश्चय करके "द्रव्य है तो कहाँ पर है?" ऐसा समझने के लिये चक्र में मेरु तथा ग्रहों के स्थानों को चालन करे। वह मैं अपने मत से कहता हूँ, सुनो ॥ ४२ ॥

यत्र चन्द्रः स्थितश्चक्रे मेरुं तत्र नवेद्धिया ॥४३½॥

अर्थ—उपरोक्त चक्र में जिस स्थान में चन्द्रमा है उस स्थान में अपनी बुद्धि से चक्र को चलाकर मेरु की कल्पना करै। अर्थात् इस प्रकार मेरु को चालित करने से मेरु से चन्द्रमा जितने नवांश में आगे रहते हैं सब ग्रह अपने स्थान से उतने-उतने अंश आगे चलित हो जाते हैं। आगे उदाहरण में स्पष्ट है देखो ॥ ४३½ ॥

एवं सञ्चालिते चक्रे यत्र वै संस्थितः शशी ॥४३॥
तत्र वाऽस्ति ध्रुवं द्रव्यं, शुक्रेणैवं जलं वदेत् ।
एवं सूर्येण वक्तव्यं शल्यं नानाविधं ध्रुवम् ॥४४॥
दैवतं गुरुणाप्येवं तत्र वाच्यं न संशयः ।

अर्थ—इस प्रकार चक्र चालित करने से जिस स्थान में चन्द्रमा पड़े उसी स्थान में निश्चय द्रव्य समझना। इस प्रकार जहाँ शुक्र पड़े वहाँ जल, जहाँ सूर्य पड़े वहाँ अनेक प्रकार के शल्य तथा जहाँ बृहस्पति हो उस स्थान में देवता समझना ॥ ४३-४४ ॥

अथ द्रव्यस्य चलाऽचलत्वमाह—

स्थिरांशे तु स्थितं तत्र चरांशे चलितं ध्रुवम् ॥४५॥
द्विस्वभावांशके वाच्यं पूर्वापरविभागयोः ।

अर्थ—चन्द्रादि ग्रह यदि स्थिर नवांश में हो तो द्रव्यादि यथा-स्थान में स्थिर है, यदि चरनवांश में हो तो यथा स्थान से चलित हो गया है, ऐसा समझना । तथा द्विस्वभाव नवांश में हो तो नवांश पूर्वार्ध में स्थिर, उत्तरार्ध में चलित समझना ॥ ४५ ॥

अथ कियद्हस्तमितायां भूमौ द्रव्यमस्तीत्याह—

गतांशकप्रमाणेन भूमानं कल्पयेद्धिया ॥४६॥
स्थिरांशे द्विस्वभावांशे द्विगुणं त्रिगुणं चरेत् ।

अर्थ—"कितने नीचे द्रव्य हैं ?" सो ग्रह के गत नवांश प्रमाण से बुद्ध्यनुसार समझना । चरराशि में हो तो गतनवांश तुल्य (प्रश्नानुसार हस्त या अंगुल अथवा गज) नीचे द्रव्य कहना । स्थिर राशि के अंश में हो तो द्विगुणित गतनवांश तुल्य और द्विस्वभाव नवांश में हो तो त्रिगुणित नवांशतुल्य हस्त आदि में समझना ॥४६॥

मेरुचन्द्रौ चरांशे चेज्जलाश्रयं विनिर्दिशेत् ॥४७॥

अर्थ—मेरु और चन्द्रमा दोनों यदि चरनवांश में हों तो जलाश्रय में (भूमि के नीचे जल भाग में) द्रव्य समझना ॥४७॥

अथ द्रव्यभाण्डज्ञानमाह—

द्रव्यभाण्डं वदेत् प्राज्ञो मेषाद्यंशे विधौ क्रमात् ।
ताम्रं, पाषाणभाण्डं च, गिरिपात्रं, मृदायसे ॥४८॥
हेमपात्रं च, पाषाणं, ताम्रं, च पित्तलं तथा ।
आयसं, मृण्मयं, कुण्डं पात्रमेवं विचिन्तयेत् ॥४९॥

अर्थ—चन्द्रमा के मेषादि नवांश से द्रव्य का पात्र इस प्रकार समझे, यथा—मेषांश में चन्द्रमा हो तो ताम्रपात्र, वृषांश में पत्थल का पात्र, मिथुनांश में धातु का, कर्कांश में मिट्टी का, सिंहांश में लोहे का, कन्यांश में सुवर्ण का, तुलांश में पाषाण का, वृश्चिकांश में ताम्र का, धनुरंश में पित्तल का, मकरांश में लोहे का, कुम्भांश में मिट्टी का, मीनांश में कुण्ड द्रव्य का पात्र समझना ॥४८-४९॥

अथ विशेषमाह—

परमोच्चांशगे चन्द्रे गगनस्थं तु सार्गलम् ।
अधिष्ठितं भवेद् द्रव्यं चन्द्रः खेटान्वितो यदि ॥५०॥

अर्थ—यदि चन्द्रमा अपने परमोच्च (१।३) में हो तो पृथ्वी से ऊपर जञ्जीर में बंधा हुआ द्रव्य समझना। तथा यदि चक्र में चन्द्र के साथ कोई ग्रह हो तो द्रव्य देवादि से रक्षित समझना ॥५०॥

यथा—

यक्षेण रक्षितं सूर्ये वायुपुत्रेण भूमिजे ।
चन्द्रात्मजे पिशाचेन कुवेरेणामरार्चिते ॥५१॥
शुक्रे प्रेतादिकेनैव म्लेच्छवीर्येण सूर्यजे ।
राहौ सर्पादिकेनैव रक्षितं प्रवदेद् धनम् ॥५२॥

अर्थ—चन्द्रमा के साथ सूर्य हो तो यक्ष से, मङ्गल हो तो हनुमान से, बुध हो तो पिशाच से, गुरु हो तो कुवेर से, शुक्र हो तो प्रेत आदि से, शनि हो तो म्लेच्छ से और राहु या केतु चन्द्रमा के साथ हो तो सर्प, विच्छू आदि से रक्षित द्रव्य समझना ॥५१—५२॥

अथ साधनक्रियादिकमाह—

चक्रेणाऽहिबलाख्येन स्वकुलैः स्थापितं धनम् ।
अदृष्टं चाऽश्रुतं वित्तं धराचक्रेण निश्चयेत् ॥५३॥

अर्थ—अपने कुल के स्थापित धन को अहिबल चक्र के द्वारा तथा अश्रुत और अदृष्ट धन को धराचक्र के द्वारा निश्चय करना चाहिये ॥५३॥

स्वप्नादिभिरनुमितिं प्रत्ययार्थं तु कारयेत् ।
स्वप्नेश्वर्या विधानेन पश्चात् स्थानं तु शोधयेत् ॥५४॥

अर्थ—विश्वासार्थ स्वप्नेश्वरी विधान से स्वप्नादि द्वारा धन का अनुमान कर पीछे स्थान का संशोधन कराना चाहिये ॥ ५४ ॥

विप्र उवाच—

किं विधानं प्रकर्तव्यं ? येन वै प्रत्ययो भवेत्।
वद मे मुनिशार्दूल ! शिष्योऽहं तव सुव्रत ! ॥५५॥

अर्थ—ब्राह्मण (सुतजन्मा) बोला—हे मुनिश्रेष्ठ ! मैं आपका शिष्य हूँ इसलिये कृपया मुझे बतलाइये कि किस प्रकार स्वप्नेश्वरी-विधान किया जाता है जिससे प्रत्यय हो सके ॥ ५५ ॥

मुनिरुवाच—

प्रणवं च ततो माया रमा स्वप्नेश्वरीति च।
ङेऽन्तो नवार्णवाख्योऽयं मन्त्रः सर्वार्थसिद्धिदः ॥५६॥

अर्थ—महर्षि बोले—प्रथम प्रणव फिर माया बीज तदनन्तर रमा-बीज फिर चतुर्थ्यन्त स्वप्नेश्वरी शब्द नमः सहित अर्थात् (ॐ ह्रीं श्रीं स्वप्नेश्वर्यै नमः) यह सब सिद्धि के देनेवाले नवार्ण मन्त्र हैं ॥ ५६ ॥

ब्रह्मचर्यरतो मन्त्री हविष्याशी जितेन्द्रियः।
भूशायी प्रजपेन्मन्त्रं लक्षमेकं यथोचितम् ॥५७॥

अर्थ—साधक ब्रह्मचर्य से रहकर हविष्य भोजन करता हुआ जितेन्द्रिय होकर भूमि में शयन करता हुआ यथोचित उपरोक्त मन्त्र का १००००० एक लक्ष जप सम्पन्न करे ॥ ५७ ॥

अश्वत्थस्य च पत्रे वै विलिखेन्मन्त्रमुत्तमम्।
दूर्वया चाऽष्टगन्धेन पूजयित्वा विधानतः ॥५८॥
विन्दुषट्कोणवृत्तं च पद्मं चाष्टदलं ततः।
त्रिरेखा भूगृहं चेदं यन्त्रं सर्वेप्सितप्रदम् ॥५९॥

अर्थ—अष्टगन्ध की रोशनाई बनाकर दूर्वा (दूब) से पीपर के पत्र में विधिपूर्वक (षोडशोपचार) पूजा करके मन्त्र लिखे। फिर विन्दु षट्कोण वृत्त और अष्टदल पद्म लिखने से सर्व कामप्रद यन्त्र होता है ॥ ५८-५९ ॥

तद्यन्त्रं मूर्ध्नि विन्यस्य शयनं तत्र कारयेत्।
यादृशं प्रवदेत् स्वप्ने तादृशं तत्र निर्दिशेत् ॥६०॥
अन्यथा दुःखमाप्नोति खननं क्रियते यदि।
देवशापमवाप्नोति नानाचिन्ता प्रजायते ॥६१॥

अर्थ—उस यन्त्र को मस्तक पर रख कर शयन करने से जिस प्रकार का स्वप्न देखे वैसा कार्य करे। अन्यथा (लोभवश) द्रव्य के लिये जमीन खोदने से देवता के शाप से दुःख और अनेक प्रकार की चिन्ता प्राप्त होती है ॥ ६०-६१ ॥

गोप्यं ज्ञानमिदं प्रोक्तं न देयं यस्य कस्यचित्।
श्रद्धायुक्ताय शिष्याय देयं वत्सरवासिने ॥६२॥

इति लोमशसंहितायां त्रयोदशोत्थानेऽदृष्टाश्रुतवस्तुनिर्णये
(धराचक्राख्यः) चतुर्विंशतितमोऽध्यायः।

अर्थ—इस गोपनीय विद्या को जिस किसी व्यक्ति को न देना। जो श्रद्धायुक्त होकर कम से कम एक वर्ष अपने पास रहे उसी को देना (पढ़ाना) चाहिये ॥ ६२ ॥

इस प्रकार लोमश संहितोक्त अदृष्ट अश्रुत वस्तुनिर्णय रूप
धराचक्र नामक यह २४ वाँ अध्याय है।

लंकाक्षितिज से जम्बूदीप का ऊर्ध्व प्रदेश देव भाग और अधः-प्रदेश दैत्य भाग है। इस लिये भारत, किन्नर और हरि वर्ष देव भाग में, तथा कुरु, हिरण्य, रम्यक ये दैत्य भाग में पड़ते हैं। केतु माल, इलावृत्त, भद्राश्व, इन तीनों वर्ष के आधे आधे दोनों भाग में पड़ते हैं। इस प्रकार जिस भाग में द्रव्य स्थान हो तदनुसार रविवर्ष, चन्द्रवर्ष या मिश्रवर्ष समझ कर द्रव्यादि का ज्ञान उक्तरीति से करना चाहिये ॥

अथोदाहरणम्—

शाके १८५४ कार्तिक शुक्ल ३ मङ्गलवार सूर्योदय से इष्ट १२।१५ घड़ी पल दिन में अदृष्ट द्रव्य के ज्ञानार्थ किसी ने प्रश्न किया तो—

दिनार्ध १४।१५॥ दिनमान २८।३०॥ तात्कालिक स्पष्ट ग्रह—
सूर्य ६।१५।७४०॥ चन्द्र ७।२१।२०।१५॥ मङ्गल ३।२९।४५।११॥
बुध ७।८।२२।१५॥ बृहस्पति ४।२५।११६॥ शुक्र ५।६।५४।७॥
शनि ९।३।२४।२॥ राहु १०।२३।१७।२१॥ स्पष्ट लग्न ११।१२।७४०॥

स्पष्ट लग्न के लिये (श्लोक २३ के अनुसार) इष्ट घड़ी १२।१५ को २ गुनाकर २४।३० इसमें ५ के भाग देने से लब्धि राश्यादि ४।२९ को तात्कालिक सूर्य ६।१५।७४० में जोड़ने से ११।१२।७४० यह द्रव्य ज्ञानार्थ स्पष्ट लग्न हुआ। दिनार्ध १४।१५ से इष्टकाल १२।१५ अल्प है इस लिये दिन के २ प्रहर के भीतर में होने के कारण (श्लोक ३० से ३३ के अनुसार) चक्र बनाकर ईशानकोण से अग्निकोण तक वृषादि १२ राशियों के नवांश चक्र लिखकर स्पष्ट लग्न ११।१२।७४० मीन के ४ चौथा नवांश में है (मीन द्विस्वभाव है) इस लिये श्लोक २४।२५ के अनुसार मीन से ५ पञ्चम कर्क राशि के ४ चौथा नवांश में मेरु का स्थान हुआ। स्पष्टार्थ चक्र देखो—

नवांशात्मक धराचक्रम्—

ई. पू. अ.

उ. द.

वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	मे.
१ हि.	१ कु.	१ कु.	१ इला	१ भ.	१ हरि	१ ह.	१ कि	१ भार	१ के.	१ के.	१ र.
२ हि.	२ कु.	२ कु.	२ इला	२ भ.	२ हरि	२ ह.	२ कि	श२ भार	२ के.	२ के.	२ र.
३ हि.	३ कु.	३ कु.	३ इला	३ शु भ.	३ ह.	३ बु ह.	३ कि	३ भार	३ के.	३ के.	३ र.
४ हि.	४ कु.	४ इला मेरु	४ इला	४ भ.	४ ह.	४ कि	४ किं	४ भार	४ के.	४ रम्य	४ र.
५ हि.	५ कु.	५ इला	५ इला	५ भ.	५सू. ह.	५ किं	५ किं	५ भार	५ के.	५ र.	५ र.
६ हि.	६ कु.	६ इला	६ इला	६ भ.	६ ह.	६ किं	६ किं	६ भार	६ के.	६ र.	६ र.
७ हि.	७ कु.	७ इला	७ भ.	७ भ.	७ ह.	७चं किं	७ भार	७ भार	७ रा. के.	७ र.	७ हि.
८ हि.	८ कु.	८ इला	८वृ. भ.	८ भ.	८ ह.	८ किं	८ भार	८ भार	८ के.	८ र.	८ हिं.
९ हि.	९ कु.	९ मं इला	९ मं भ.	९ भ.	९ ह.	९ किं	९ भार	९ भार	९ के.	९ र.	९ हिं.

वा. प. नै.

मेरु से आरम्भ कर १२ अंश (अर्थात् कर्क के चौथा ४ नवांश से सिंह के ६ छठा नवांश) तक इलावृत। उसके आगे १२ अंश (सिंह के ७ सप्तम से कन्या के ९ नवम अंश) तक भद्राश्व। उसके आगे १२ अंश (तुला के १ प्रथम अंश से, वृश्चिक के ३ तृतीय अंश) तक हरिवर्ष। उसके आगे १२ अंश (वृश्चिक के ४ अंश से धनु के ६ अंश) तक किन्नरवर्ष। उसके आगे १२ अंश (धनु के ७ म अंश से मकर के ९ नवम अंश) तक भारतवर्ष। उसके आगे १२ अंश (कुम्भ के १ प्रथम से मीन के ३ अंश) तक केतुमाल। उसके आगे १२ अंश (मीन के ४ से मेष के ६) तक रम्यक वर्ष। रम्यक से आगे १२ अंश (मेष के ७ से वृष के ९) तक हिरण्य। उसके आगे १२ अंश (मिथुन के १ से कर्क के ३) तक कुरु वर्ष हुआ। ऊपर चक्र देखो ॥

तात्कालिक स्पष्ट ग्रह का न्यास—तुला के ५ नवांश में सूर्य। वृश्चिक के ७ नवांश में चन्द्रमा। कर्क के नवम ९ नवांश में मङ्गल। वृश्चिक के ३ नवांश में बुध। सिंह के ८ नवांश में बृहस्पति। कन्या के ३ नवांश में शुक्र। मकर के २ नवांश में शनि। तथा कुम्भ के ७ सप्तम नवांश में राहु पड़ा। चक्र देखो।

इस प्रकार चक्र में ग्रहों का न्यास करने से सूर्य हरिवर्ष में और चन्द्रमा किन्नर वर्ष में पड़ा ये दोनों चन्द्रमा ही के वर्ष हैं इसलिये "चन्द्रवर्षे यदाऽर्केन्दू निधिर्ज्ञेयस्तदा ध्रुवम्" इस (३४ श्लोक) के अनुसार प्रश्नकर्त्ता के अभीष्ट स्थान में अवश्य द्रव्य है, यह निश्चय हुआ।

तथा चन्द्रमा किसी ग्रह से युत नहीं है अतः (५१ श्लोक) के अनुसार द्रव्य किसी भी देवसे अधिष्ठित (रक्षित) नहीं हैं ऐसा सिद्ध हुआ।

इस प्रकार द्रव्य का लाभ होना निश्चित होने पर स्थान के किस भाग में कितने हाथ खोदने पर द्रव्य मिलेगा? इस प्रश्न के विचार के लिये श्लोक ४३ के अनुसार मेरु से चन्द्रमा ४० अंश पर है अतः मेरु को चन्द्र स्थान में चालित कर ले जाने से सब ग्रह अपने अपने स्थान से ४० अंश में पड़ेंगे। इस प्रकार चन्द्रमा अपने स्थान (वृश्चिक के ७ अंश.) से चलित होकर मेष के प्रथम १ अंश में (अर्थात् चक्र के ठीक

अग्निकोण में) पड़ा। इसलिये उसी स्थान में द्रव्य है ऐसा सिद्ध हुआ। चक्र देखो—

ई० पू० अ०

उ० द०

वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.	मे.
१	१	रा १	१	१	१	१	१	१	१	१	चं १
२	२	२	२	२	२	२	२	बृ २	२	२	२
३	३	३	३	३	३	३	मं ३	३	३	३	३
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
श ५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
६	६	६	६	६	६	६	६	शु ६	६	बु ६	६
७	७	७	७	७	मेरु७	७	७	७	७	७	७
८	८	८	८	८	८	८	८	८	सू ८	८	८
९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९

वा० प० नै०

शल्य आदि का विचार करना हो तो जहाँ सूर्य पड़े वहाँ शल्य, इत्यादि (४३।४४ श्लोक) से स्पष्ट है।

तथा चन्द्रमा वृश्चिक के सप्तम ७ नवांश (चरराशि मकरांश) में है इसलिये श्लोक ४६ के अनुसार ७ हाथ नीचे खोदने से द्रव्य मिलेगा।

तथा चन्द्रमा मकर के नवांश में है इसलिये ४८।४९ श्लोक के अनुसार लोहे के पात्र में रक्खा हुआ द्रव्य है ऐसा सिद्ध हुआ।

शेष विषय ग्रन्थ के मूल श्लोक और टीका से स्पष्ट ही है।

इति श्रीलोमशोक्तस्य धराचक्रस्य सुस्फुटा।
उदाहरणसंयुक्ता टीकेयं पूर्णतां गता॥
वेदवातेभभूतुल्ये शकाब्दे कार्तिके सिते।
अनया साधकानां च सिद्धिर्भवतु शाश्वती॥

❀ शुभम् ❀

—०—